लोकप्रियसाहित्यग्रन्थमाला-98

॥ ॐ ॥

कालिदास-प्रणीतस्य

अभिज्ञानशकुन्तला नाटकस्य पञ्च रङ्गावृत्तयः

(काश्मीरी, मैथिली, बंगीय, दाक्षिणात्य एवं देवनागरी रंगावृत्तियों के मूल संस्कृत-पाठ,
उन पाँचों का तुलनात्मक अध्ययन एवं पुनर्ग्रथित प्रथम अनुमित पाठ)

प्रधानसम्पादकः

प्रो. परमेश्वरनारायणशास्त्री

कुलपतिः

सम्पादकः

वसन्तकुमार म. भट्ट

PREFACE

The work that you have in your hands, dear reader, is an outcome of monumental endeavour combined with an extra-ordinary scholarship and has been produced after a constant labour of many years executed with great perseverance and patience. The author had to wade through the text of many thousand pages (i.e. folia) of hundreds of Manuscripts of this immortal work of Kalidasa available in more than a dozen scripts to come to the conclusions which he has assiduously and carefully put together in this work which now logically and convincingly narrates the long and eventful journey of the present text through many regions of India — from top (Kashmir) to bottom (Kerala) and back to its heartland. One may agree, or occasionally even disagree with the views and the statements of the author or the conclusions drawn by him, however cannot help but wonder the tremendous labour that he has invested in interpreting with sharp logic each Act, each scene, each situation, each dialogue, each sentence and even each word and each expression of each version!

As mentioned, there are almost innumerable number of MSs of Shakuntala scattered all over India in private and institutional collections, and some good ones are also preserved in the libraries of the West. Scanning a large number of these MSs of all varieties, all genres and of all scripts, the author comes to the conclusion that the significant text varieties that we have today are most probably outcomes of two main recensions, the Kashmirian or the Sharada recension and the other Non-Sharada or some of Mid-Indian recension, a combination and contamination of the two, with reductions and new additions (i.e. interpolations) give rise to five clear-cut and almost independent versions of the text : the Kashmirian, the Maithili, the Bengali, the South-Indian and the most widely circulated — although perhaps standing at the farthest one from the original —the Devanagari version. Examining bit for bit the readings of these many texts , he springs a great surprise to us — which may even well be a shock to most of the lovers of this unique dramatic work, that has traveled not only to every nook and corner of this land but all through the world in its translations—, that None of these five versions faithfully and exactly represent the 'Original' of our greatest poet and dramatist! All of these are simply 'Stage-scripts' (raṅgāvṛttayaH) of the original play prepared by the stage-directors (Sūtradhāras) of different cultural or linguistic regions, sporadically and slightly moderating the text here and there, reducing or omitting certain sub-scenes or dialogues which they considered redundant or which they thought did not suit the cultural milieu, the ethical views, or the social practices of the region in which the play was to be staged, but sometimes also enriching it with fresh dialogues or one or two fresh and newly composed verses in order to let the scene look more logical or to be more effective on the stage!

With his penetrating skill, which our Patañjali would term as 'mahatī sūkṣmekṣikā', the author has examined and logically analyzed each scene with all its actions and all its dialogues giving his remarks on their appropriateness or otherwise, adducing full and detailed justification for his comments and remarks which absolves the author—to a great extent at least— of the charge of a purely subjective assessment of a reading or a scene as per his personal choice, predilections, or an ingrained bias.

The author divides these five versions of the Shakuntala primarily into two text-groups, a larger one which comprises in itself the present Kashmirian, Maithili and Bengali versions, and a smaller text-group which is a slightly abridged and compact form of the original and out of which have emerged the

भूमिका

संस्कृत तथा भारतीय विद्या के अध्येताओं के लिये यह परम प्रसन्नता का विषय है कि प्रो. वसंतकुमार भट्ट के द्वारा परिश्रमपूर्वक निर्मित अभिज्ञानशकुन्तला की पाँच रंग आवृतियों का प्रामाणिक सुसंपादित संस्करण प्रकाशित हो रहा है। प्रो. भट्ट का यह कार्य कालिदासविषयक अध्ययन तथा पांडुलिपिशास्त्र को अत्यंत महत्त्वपूर्ण योगदान है।

प्रो. भट्ट ने पांडुलिपियों पर अनुसंधान की एक विशिष्ट प्रणाली विकसित की है। इस क्षेत्र में यह उनकी मौलिक देन है। उन्होंने अभिज्ञानशकुन्तला नाटक की काश्मीरी, मैथिली, बंगाली, देवनागरी तथा दाक्षिणात्य - इन पाँच वाचनाओं का विभिन्न पांडुलिपियों के गहन अध्ययन कर के विश्लेषण किया है, साथ ही इस नाटक की अनेक टीकाओं का भी मंथन और आलोडन-विलोडन किया है। अपने अध्ययन में सारी वाचनाओं के उपलब्ध पाठों व पाठान्तरों की मीमांसा करते हुए वे इस नाटक के मूल पाठ में विचलन-क्रम की आनुक्रमिकता का संधान करते हैं। उनके निष्कर्ष रंगावृत्तियों में विचलन की प्रक्रिया की पैनी समझ के साथ प्रस्तुत हुए हैं। तदनुसार उपलब्ध पाँचों वाचनाओं में से काश्मीरी वाचना को वे प्राचीनतम सिद्ध करते हैं। इस काश्मीरी पाठ में किस प्रकार कतिपय परिवर्तन होते हुए मैथिल पाठ बना, और इन दोनों वाचनाओं की बंगदेश की यात्रा में इस पाठ में किस प्रकार नये आयाम जुड़े तथा इन तीनों वाचनाओं में कालिदास की रचना का पाठ किस प्रकार क्रमशः बृहत् से बृहत्तर, एवं बृहत्तर से बृहत्तम होता गया - शकुंतलानाटक की अखिलभारतीय यात्रा का यह सर्वेक्षण जितना ही प्रमाणप्रतिपन्न है, उतना ही विस्मयकारी भी है। प्रो. भट्ट के इस अनुसंधान के शकुंतलानाटक के संबंध में प्रचलित कतिपय पूर्वनिर्मित धारणाएँ टूट गई हैं - विशेष रूप से देवनागरी वाचना की प्रामाणिकता पर उन्होने जो प्रश्नचिह्न लगायें हैं, वे विचारणीय हैं। शकुंतलानाटक के पाठविचलन की यह प्रक्रिया प्राचीन काल में सारे भारत में पांडुलिपियों के निर्गमन और प्रदाय को ले कर भी चौंकाने वाले तथ्य सामने रखती है। प्रो. भट्ट की यह मान्यता सही लगती है कि शकुंतला नाटक ने दक्षिण में पहुँच कर अपेक्षाकृत संक्षिप्त कलेवर धारण किया, क्यों कि दक्षिण के नाट्य प्रयोक्ता या चाक्यार संस्कृत के प्राचीन नाटकों को अभिनय की दृष्टि से संक्षिप्त बना लेते थे। काश्मीर या सुदूर दक्षिण से संस्कृत की पांडुलिपि मध्यदेश में पहुंचे - इसकी भी कोई व्यवस्था अवश्य रही होगी। पाठविचलन की प्रक्रिया में किस तरह कालिदास की मूल रचना का तर्क कहीं कहीं टूट गया है - यह भट्ट जी ने रोचक उदाहरणों से स्पष्ट किया है। केवल संस्कृत के पाठ्य की ही नहीं उन्होंने पाँचों रंगावृत्तियों में प्रयुक्त प्राकृत भाषा के पाठ की प्राकृत व्याकरण की दृष्टि से भी इसी प्रकार अच्छी छानबीन की है। उनके निष्कर्ष में प्राकृत भाषा के पाठों की दृष्टि से भी काश्मीरी वाचना की प्रामाणिकता और प्राचीनता ही सिद्ध होती है। भट्ट जी ने नाट्यशास्त्र के कुछ विधानों तथा परिभाषाओं का विनियोग कालिदास की रचना में दिखाते हुए पुनः यह सत्यापित किया है कि काश्मीरी वाचना नाट्यशास्त्र के अधिक निकट है, जब कि देवनागरी वाचना में दशरूपक आदि परवर्ती ग्रंथों के संस्कार से नाट्यविषयक पारिभाषिक शब्दावली में व्यत्यास हुआ है। नाट्यशास्त्र में स्वगतम् इस संवाद शैली के प्रयोग का निर्देश नहीं है, अतः काश्मीरी वाचना में उचित ही स्वगतम् के निर्देश के साथ संवाद नहीं आये हैं। जब कि देवनागरी पाठ में दशरूपक आदि परवर्ती ग्रंथों के प्रभाव से स्वगतम् जैसे नाट्य निर्देश समाविष्ट हो गये हैं। अलम् अतिविस्तरेण इस सूत्रधारोक्ति की काश्मीरी वाचना में अनुपस्थिति और अन्य वाचनाओं में इसके समावेश की भट्ट जी की मीमांसा भी इस दृष्टि से विश्वसनीय लगती है।

अनुक्रमणिका

समर्पण *iii*

प्रकाशकीयम् -प्रो. परमेश्वर नारायण शास्त्री *v*

Preface -Dr. G. C. Tripathi *vii*

भूमिका -प्रोफेसर डॉ. श्री राधावल्लभ त्रिपाठी *ix*

मामकीनं निवेदनम् -वसन्तकुमार म. भट्ट *xi*

1. **पूर्वपीठिका :** **पृ. 1 -50**

(1) पांच रंगावृत्तियों की प्रस्तावना:-1. अभिज्ञानशकुन्तला/अभिज्ञानशाकुन्तल नाटक के पाँच पाठों से सम्बद्ध जिज्ञास्य विषय (पृ.-1), 2. आधुनिक पाठसम्पादनों का परीक्षण (पृ.-3), 3. अभिज्ञान-शकुन्तला के पाठविचलन की आनुक्रमिकता (पृ.-4), 4. पाँच वाचनाओं के पाठ में 'रंगावृत्तियों के (ही) पाठ है' इस मत के साधक-प्रमाण (पृ.-6), 5. इस नाटक के विविध दृश्यों की परिवर्तन-यात्रा का आलेखन (सातों अंकों के पाठभेदों में प्रतिबिम्बित प्रयोग-वैविध्य, एवं रंगावृत्तियों के आन्तर प्रवाहों का चित्र) (पृ.-13 से 38), 6. रंगावृत्तियों के अनुमानित कालखण्ड (पृ.-38), 7. रंगावृत्तियाँ होते हुए भी मूल पाठ की बहुश: सुरक्षा (पृ.-39), 8. 230 वर्षों के दौरान इस नाटक के पाठ की प्रकाशन सम्बन्धी प्रवृत्तियों का विहंगावलोकन (पृ.-40), 9. प्रस्तुत उपक्रम की आवश्यकता एवं स्वरूप (पृ.-42), 10. इस नाटक के तीन शीर्षक (पृ.-45), 11. अभिज्ञानशकुन्तला की वाचनाओं का निर्धारण एवं वंशवृक्ष (पृ.-47), 12. भविष्य के लिए अवशिष्ट कार्य (पृ.-49), 13. प्रस्तुत सम्पादन की पद्धति (पृ.-49-50)।

उत्तर-पीठिका:-

2. **मूल नाटक की काश्मीरी रंगावृत्ति का पाठ॥** **पृ. 51 से 162**

भूमिका:- काश्मीरी रंगावृत्ति के सातों अंकों का मंचनलक्षी विश्लेषण **पृ. 51 से 77**

(क) अङ्क - 1, (पृ. 78 से 89)

(ख) अङ्क - 2, (पृ. 90 से 97)

(ग) अङ्क - 3, (पृ. 98 से 109)

(घ) अङ्क - 4, (पृ. 110 से 121)

(ङ) अङ्क - 5, (पृ. 122 से 131)

(च) अङ्क - 6, (पृ. 132 से 149)

(छ) अङ्क - 7, (पृ. 150 से 162)

आकृति है ऐसा लक्षित होता है। परंतु राजा ने तुरंत ही उस प्रतिहारी को संयमित करते हुए कहा कि, भवतु, अनिर्वर्ण्यम् परकलत्रम्। यह वाक्य काश्मीरी पाठ नहीं था। यह तो मैथिली रंगकर्मियों ने किया हुआ प्रक्षेप है। इस वाक्य के द्वारा वे राजा दुष्मन्त के चरित्र को एक ऊँचाई पर स्थापित करना चाहते होंगे। लेकिन यह बात साफ है कि उस वाक्य का प्रक्षेप करने की पूर्व-तैयारी करने के लिए ही, मैथिली रंगकर्मियों ने देव, *प्रसन्नमुखरागा ऋषयः "सस्त्रीकाः" दृश्यन्ते।* ऐसा एक अधिक शब्द का प्रक्षेप किया था।। [सन्दर्भ–उक्ति-क्रमांक - 54, 56 एवं 57]

(8) शकुन्तला-प्रत्याख्यान प्रसंग के सन्दर्भ में मैथिली रंगावृत्ति का एक महत्त्व यह है कि राजा दुष्यन्त ने जब शकुन्तला को परभृता का उपमान दिया तब नायिका निरतिशय कोपाविष्ट होकर, उसे अनार्य शब्द से सम्बोधित करती है। काश्मीरी रंगावृत्ति के पाठ में वह अनार्य शब्द उपलब्ध नहीं होता है। यहाँ नायक के मुख से परभृतिका शब्द का प्रयोग होते ही शकुन्तला जैसी अनागस तापस कन्या का प्रत्याख्यान इतनी पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है कि यहाँ शकुन्तला के लिए अनार्य शब्द का प्रयोग करना स्वाभाविक प्रतीत होता है, और ऐसा हो जाना अनिवार्य भी लगता है। मैथिली रंगावृत्ति की पाठपरम्परा में इस सर्वथा समुचित शब्द की जो रक्षा हुई है, उसीने शकुन्तला की घनीभूत वेदना को वाचा दी है। (ऐसे कुछ स्थानों को देख कर ही लगता है कि जिन पाठों की रक्षा काश्मीरी रंगावृत्ति में नहीं हो पायी है, वे पाठ मैथिली रंगावृत्ति में सुरक्षित रूप में संचरित हुए हैं। जिसको देख कर लगता है कि मैथिली पाठशोधकों के सामने कदाचित्कविप्रणीत मूलपाठ की प्रतिनिधि भूत कोई प्रति रही होगी। इस विचार को कोई केवल कल्पना भी कह सकता है। लेकिन मैथिली पाठ में जहाँ जहाँ प्रसंगोचित या सन्दर्भोचित सटीक अभिव्यक्ति देखी जाती है, और उसके सामने खड़ी प्राचीनतम काश्मीरी पाठपरम्परा में वह नहीं होती है, तब ऐसा अनुमान या कल्पना करने को हम बाध्य हो जाते हैं।।) [सन्दर्भ–उक्ति-क्रमांक - 110-111]

(9) शकुन्तला ने दुष्यन्त को अनार्य शब्द से सम्बोधित किया है। यहाँ क्रोधाग्नि प्रकट होने की क्षणों में शकुन्तला की जो मुखाकृति हुई थी, उसका वर्णन करते हुए नायक दुष्मन्त ने दो श्लोकों का उच्चारण किया है। (किन्तु काश्मीरी रंगावृत्ति में इसके लिए केवल एक ही श्लोक आता है।) यहाँ मैथिली रंगावृत्ति में "अपि च" निपात से अवतारित दोनों ही श्लोक प्रक्षिप्त लगते हैं। क्योंकि प्रथम "न तिर्यगवलोकितं भवति चक्षुरालोहितम्०" श्लोक में शकुन्तला की भ्रू का स्वभावोक्तिपूर्ण वर्णन है। तथा दूसरे श्लोक में "मय्येवमस्मरण-दारुण-चित्तवृत्तौ०" इन शब्दों से शकुन्तला की भ्रूकुटि के लिए कामदेव के शरासन का भङ्ग होने की उपमा दी गई है, जो पुनरुक्ति युक्त है। एवमेव, दोनों ही श्लोकों में अप्रासंगिक काव्यालाप है।। [सन्दर्भ –उक्ति-क्रमांक 112 एवं 114]

(10) मैथिली रंगावृत्ति के पाठ में, प्रत्याख्यान-प्रसंग में शकुन्तला जब राजा को धर्मकञ्चुक-प्रवेशिन् एवं तृणच्छन्नकूप की उपमा देती है तब दुष्मन्त ने निम्नोक्त वाक्य कहा है:-"दुष्यन्तः - (प्रकाशम्) भद्रे, प्रथितं दुष्मन्तचरितं प्रजासु। तवापीदं दृश्यते।", किन्तु यहाँ काश्मीरी पाठ में "भद्रे, दुष्यन्त-चरितं प्रजासु प्रथितम्। न चापीदं दृश्यते।" ऐसा लिखा हुआ मिलता है। इन दो पाठभेदों में जो अन्तर है, वह बहुत महत्त्वपूर्ण है। काश्मीरी पाठ के अनुसार दुष्यन्त केवल अपने चरित की रक्षा के लिए कोशिश कर रहा है ऐसा दिखता है। लेकिन मैथिली पाठ के अनुसार तो दुष्मन्त "मैं ऐसा हूँ, और तू ऐसी है" ऐसी भाषा बोलने लगता है, जो नायक के चरित को शोभा नहीं देता है। यह पाठभेद केवल मैथिली रंगावृत्ति में ही मिलता है।। [सन्दर्भ–उक्ति-क्रमांक - 115]

(11) काश्मीरी पाठ की तरह मैथिली पाठ में (एवं बंगाली में भी) शकुन्तला के मुख में रखी निम्नोक्त गाथा मिलती है:-*तुम्हे य्येव पमाणं जाणध धम्मत्थितिं च लोअस्स। लज्जा-विनिज्जिदाओ जाणन्ति खु किण्ण महिलाओ।।* (मैथिली पाठ में यह गाथा कुछ पाठभेद के साथ मिलती है) इसमें नायिका अपना मुग्धत्व छोड कर, "महिलाएं भी धर्मस्थिति ठीक तरह से समझ सकती हैं, इसमें केवल पुरुषों का ही एकाधिकार नहीं है। लज्जावशात्

कार्या सैकतलीनहंसमिथुना स्रोतोवहा मालिनी, पादास्तामभितो निषण्णचमरा गौरीगुरोः पावनाः।
शाखालम्बितवल्कलस्य च तरोर्निर्मातुमिच्छाम्यधः शृङ्गे कृष्णमृगस्य वामनयनं कण्डूयमानां मृगीम्॥ 5-17 ॥

केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः

(प्राक्तनं राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मानितविश्वविद्यालयः)

56-57, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, जनकपुरी, नवदेहली-110058

दूरभाष : 011-28524993, 28521994, 28520977

email : rsks@nda.vsnl.net.in website : www.sanskrit.nic.in